बदलते सामाजिक पारिवारिक रिष्ते और साठोत्तरी कहानी

डॉ0 सुधीर कुमार सिंह
सिवान

मानव आदिकाल से ही क्रियाषील रहा है। उसकी क्रियाषीलता के ही कारण सभ्यता, संस्कृति और साहित्य का विकास हुआ। उसकी यह क्रियाषीलता साहित्य के क्षेत्र में विषेष रुप से दिखायी दी जिसके कारण साहित्य की विभिन्न विधाओं का विस्तार हुआ। इन विकसित विधाओं में कहानी ने अपना अलग मुकाम बनाया तभी तो निःसंकोच भाव से यह कहा जा सकता है कि कहानी आज के साहित्य का सबसे सषक्त और महत्वपूर्ण विधा है। महान् कथाकार मुंषी प्रेमचंद और मैक्सिम गोर्की ने भी कहानी को मानव–जीवन का अभिन्न अंग माना है। तभी तो जब भी साहित्य के इतिहास पर विचार होता है, उसमें कहानी और उसके इतिहास व उसमें अभिव्यक्त मानव–जीवन के यथार्थ को बुनियादी तौर पर अलग से समझने की कोषिषें होती रही हैं, चाहे वह प्रेमचंदयुगीन कहानी का मसला हो अथवा नयी कहानी या समकालीन कहानी का। साहित्य भी अन्य विधाओं के समानान्तर कहानी में मनुष्य के मन एवं समाज में उसकी उपस्थिति का कलात्मक आख्यान देखने को मिलता है। यह आख्यान इतना आकर्षक होता है कि बच्चे से लेकर बुढ़े तक उसमें दिलचस्पी लेते दिखाई पड़ते हैं। इसलिए साहित्यक विधाओं के किसी विषेष कालखण्ड का वस्तुपरक अध्ययन हमें यह अवसर प्रदान करता है कि रचनाओं अथवा कहानी में व्यक्त जीवन और समाज के साथ उसके यथार्थ संबंध को हम समकालीन संदर्भों में किस रुप में देखें और विचार करें। उसमें मनुष्य–मात्र के निर्मित स्थान की खोज करें। कथा साहित्य के इतिहास में समकालीन कहानी का अध्ययन भी हमें इसी प्रकार का अवसर प्रदान करता है।

समकालीन हिन्दी कहानी पर विचार करते हुए यह बात साफ होती है कि इस दौर के कहानीकारों ने समकालीन समय, समाज–परिवर्तन एवं विकास की प्रक्रियाओं को ध्यान में रखते हुए कहानी की रचना की है। इसलिए इस दौर के कहानियों की जो दुनिया है वहां कहानी के रचने अथवा सर्जनातमकता की ये प्रक्रियाएं इतनी जटिल और विविधतापूर्ण है कि उनपर विचार एवं उनका आकलन करना अत्यंत दुःसाध्यपूर्ण कार्य है। मैक्सिम गोर्की सृजनात्मकता के इतिहास को मानव इतिहास से कहीं अधिक दिलचस्प और महत्वपूर्ण मानते थे। कारण मानव–इतिहास को समझने के लिए बहुत सारे तथ्यात्मक संदर्भ होते है परन्तु सृजनात्मकता का जो इतिहास है वह लेखक–कलाकार की जिंदगी, उसके जाने–अनजाने परिवेषों, प्रसंगों, अनुभवों एवं विचारों के कई ऐसे

पक्षों से निर्धारित और नियंत्रित होता है जिसे समझने के लिए सृजन की उदात्तता तक पहुंचना पड़ता है।

स्वतंत्रता के बाद जिस नई सोच ने जन्म लिया, उसने व्यक्ति को हर स्तर पर प्रभावित किया। इसी सोच के तहत उसकी सामाजिक, पारिवारिक, राजनीतिक बौद्धिक स्थितियां प्रभावित हुई और उनमें व्यापक बदलाव आया। यह बदलाव केवल सामाजिक, राजनीतिक, पारिवारिक या बौद्धिक स्तर तक ही सीमित नहीं था बल्कि साहित्य के क्षेत्र में भी उतना ही प्रभावकारी था। इसका प्रमुख कारण यह था कि प्रत्येक रचनाकार अपने समय और सामर्थ्य के प्रति प्रतिबद्ध होता है क्योंकि वह भी उसी समय और समाज से जुड़ा होता है जिससे उसकी भावनाएं। राजेन्द्र यादव के अनुसार ''वह किसी भविष्य और अतीत के प्रति प्रतिबद्ध नहीं होता है, वह प्रतिबद्ध है किवल अपने वर्त्तमान के प्रति, अपने उस सीमित यथार्थ के प्रति जो उसकी चेतना परिधि में आ गया है। वह किसी समाज और व्यक्ति की जिम्मेदारी नहीं ओढ़ेगा, वह जिम्मेदार है केवल अपने उस जीवित परिवेष के प्रति जो हम सबको बनाता है और जिसे हम सब मिलकर बनाते हैं स्वयं जिसके अंग हैं।''

आजादी के बाद के दौर में सामाजिक–आर्थिक जीवन में एक बदलाव आना शुरू हुआ और साठोत्तरी कहानी में यह बदलाव व्यापक स्तर पर दिखायी पड़ा। इसी बदलाव की प्रक्रिया से प्रभावित होकर साठोत्तरी कहानीकारों ने मानव जीवन के विभिन्न आयामों में झांका और उनमें आ रहे नित्य बदलाव को अपनी कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत भी किया। इन कहानीकारों ने उभरते नए समाज, अंचल विषेष से लेकर गांव, कस्बे तथा शहरों के जीवन और पारिवारिक संबंधों और कहीं–कहीं उनमें आती दरकन को रेखांकित किया। साथ ही सामाजिक विसंगतियों, व्यवस्था के अंतर्विरोधों तथा पूंजीवादी समाज पर भी तेज–तीखे प्रहार किया। इसे हम दूसरे शब्दों में कहें तो आज की हिन्दी कहानियाँ सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक विसंगतियों और विद्रुपताओं पर अनेकानेक सटीक टिप्पणियाँ और दस्तावेज नजर आती है।

साठोत्तरी कहानी का अगर समाजषास्त्रीय दृष्टि से मूल्यांकन किया जाए तो कई प्रष्न सिर उठाते नजर आते हैं – जैसे आज का समाज और कहानी किन विचारों और मूल्यों को लेकर गतिषील है? और आज के कहानीकारों का रूख कैसा है?

साठोत्तरी कहानीकारों ने रूढ़ मान्यताओं को समाप्त करने के लिए अपनी कहानियों के माध्यम से आवाज बुलंद किया क्योंकि बदलती नवीन चेतना के साथ ये रूढ़िगत मान्यताएं सामंजस्य स्थापित नहीं कर पा रही थी। साठोत्तरी कहानी ने व्यक्ति के इस दर्द को बखूबी समझा और बहुत

गहरे गंभीर रुप से जुड़ने का प्रयास किया। इसलिए इस काल के कहानीकारों ने प्रेम–कथाएं नहीं लिखकर गहराई से जन सामान्य की समस्याओं से भिड़कर जीवन के खुरदुरे यथार्थ को वाणी दे रहा है अर्थात् ये कहानीकार सामान्य मनुष्य की जिंदगी जीने के ढंग जीविका के साधन, उनकी समस्याओं और चिंताओं को आवाज दे रहा है। इन कहानियों में वर्तमान परिवेष की भ्रष्ट व्यवस्था को बदलने की एक अकुलाहट, आक्रोष की चिंताएं भी हैं।

औद्योगिक युग की अनेक विघटनकारी प्रवृत्तियों, वैज्ञानिक उन्नति, तकनीकि तथा प्रौद्योगिकी विकास के कारण सन् 60 के बाद का सामाजिक मूल्य तीव्र गति से परिवर्तित हुआ। ''इन बदली हुई जीवन स्थितियों का आत्मीय संबंधों एवं रिष्तों पर यह प्रभाव पड़ता है कि आत्मीय संबंधों की धुरी प्रेम समाप्त होता चला जाता है और उसके स्थान पर रिष्ते अर्थ के आश्रित होते चले जाते हैं। संबंधों का अर्थाश्रित और सुविधापरक हो जाना आज के जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना है।''

अवध नारायण मुद्गल की कहानी ''और कुत्ता मान गया'' में पूंजीवादी व्यवस्थाओं में पुरूष और नारी दोनों धन कमाने की होड़ में कभी–कभी समाज के ऐसे दो हिस्सों में बँट जाते हैं कि उनका आपसी रिष्ता भी अमानवीकरण की प्रक्रिया से गुजरने लगता है, के दर्द को उभारती है। कहानी में 'कुत्ता' ही केवल मानवीय संबंधों को पहचान पाता है और वही अफसर के घर पति–पत्नी के बीच पहचान का माध्यम बनता है – ''मेरी आंखों के सामने किसी बड़े से अपरिचित समाज का धुँधला चित्र उभरता है और धीरे–धीरे समाज दो आकृतियों में सिमट जाता है। एक कुत्ते की दूसरी साहब की।'' इस व्यवस्था में मानवीयता की पहचान का जिम्मा मनुष्य का नहीं अपितु कुत्ते का दिखाकर लेखक व्यक्ति की मूल्य टूटने की पीड़ा को चित्रित करता है – ''उस घर का असर ही कुछ ऐसा है कि वहां मेरी बीबी भी मुझे नहीं पहचान पाती।' हां, पहचानता है तो वही कुत्ता जिसका मैं आदर करता हूं, जिससे मेरी भावात्मक आत्मीयता हो गयी है।''

वर्त्तमान समय में लोगों के अंदर सामाजिक मूल्यों को लेकर दोहरी मानसिकता घर कर गयी है। जहाँ कुछ लोग पुरानी मान्यताओं, रूढ़ियों और विचारों को त्यागने को तैयार नहीं हैं, वही जो नवीन सोच के हैं वे इससे अपना मेल नहीं बैठा पा रहे हैं। ऐसी स्थिति में एक अलग मानसिकता विकसित हो रही है, जिसमें युवा पीढ़ी कुछ दिग्भ्रमित हो रही है कि वह किसे स्वीकारे और किसे अस्वीकार करे? अषोक अग्रवाल की कहानी 'महामारी' इसी दुविधामय स्थिति को प्रदर्षित करती है – ''इन सभी नियतिवादी और परम्पराओं का पालन करने वाले थे। नयी मान्यताएं और तेजी से बदलती जा रही है परम्पराएं हम सभी को घोर वितृष्णा देती.....। मैंने चाहा था कि कुछ परम्पराएं अब

तोड़ देनी चाहिए। एक दो दिन मैंने शोर–षराबा भी किया और पढ़ाई की आवष्यकता को लेकर विद्रोह..... ।''

बदलती सामाजिक व्यवस्था का सबसे वीभत्स रुप हमें पारिवारिक संबंधों में आते बिखराव के रुप में देखने को मिल रहा है। बढ़ते आर्थिक समीकरणों और भौतिकता का प्रभाव साठोत्तरी कहानी और समाज पर व्यापक रुप से पड़ा। इन आर्थिक समीकरणों और भौतिकता ने व्यक्ति को आत्मपरक और स्वार्थी बना दिया जिससे मानवीय रिष्ते टूटने लगे। मानवीयता और भाईचारे के संबंध क्षीण होते गए। नित्यप्रति संबंधों में आती इस गिरावट ने मां–बाप जैसे पवित्र रिष्तों को भी नहीं छोड़ा, जिससे ये रिष्ते भी आपस में आज के दौर में निरर्थक बोझ सदृष लगने लगे। संजीव ठाकुर की लम्बी कहानी ''झौआ बैहार'' में मां पोते–पोती की आया बनकर रह जाती है। ज्ञान रंजन ने संबंधों में आए बिखराव को बड़ी संजीदगी से प्रस्तुत किया है। ज्ञान रंजन की कहानियों में इस बिखराव का दर्द अनेक रुपों और स्तरों पर दिखायी पड़ता है। 'षेष होते हुए' के 'मँझले' को अपना घर अलग–अलग हिस्सों (द्वीपों) में बंटा हुआ लगता है, उसे लगता है कि एक ही घर में कई बार हो गए हैं। छोटू भाई हीनू का अलग कमरा है, जिसमें वह अपने दोस्तों का अपने ढंग से आदर सत्कार करता है। भाई–भाभी का घर गृहस्थी के सामान से बँटा अलग कमरा है। बहन ने बरामदा में पार्टीषन कर अलग कमरा बना लिया है – जब वे सबलोग किसी अवसर विषेष पर इकट्ठे होते हैं तो ''मँझले'' को बड़ा विचित्र लगता है।

व्यक्ति के अंदर बढ़ती स्वार्थपरता ने भी संबंधों की दीवार को तोड़ा है। सास–बहू के संबंधों की निर्ममता का सुंदर चित्रण मंजूल भगत की 'षुभ–अषुभ' कहानी में हुआ है। बहू शर्मीला आसन्न प्रसवा है, किन्तु डॉक्टरों ने बताया है कि उसे बचाने के लिए बच्चे का सिर गर्भ में ही कुचलना आवष्यक है किन्तु सास हर हालत में अपनी वंष–बेल चलाने वाला बच्चा ही चाहती है, बहू की उसे तनिक भी चिंता नहीं है। पति प्रदीप भी माँ के कहने पर हर हाल में अपना बच्चा ही जीता पाना चाहता है। शर्मीला के माँ–बाप उससे विविध प्रकार से अनुनय कर शर्मीला के प्राण बचाने की भिक्षा माँगते हैं – तुम्हारा बच्चा अभी अजन्मा है, तुमने उसे देखा तक नहीं। उसका इतना मोह कि तुम एक पत्नी, एक पली–पलायी औरत को उसपर कुर्बान कर दोगे? किन्तु वह उनकी एक नहीं सुनता। दूसरी ओर शर्मीला अपने प्राण देकर भी बच्चा उन्हें उपहार में देना चाहती है। अंत में दोनों मां और बेटा शर्मीला और उसका नवजात षिषु समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकार यही संबंधों का अत्यन्त संकीर्ण स्वार्थपरक और कुत्सित रुप प्रस्तुत हुआ है।''

परिवारिक संबंधों को उनकी निर्जीवता को आज के सर्जक ने व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण से भी परखता है। पर व्यंग्य जहां एक ओर रचना को अधिक गहरा बनाता है वहीं थोड़ी सी भी असावधानी उसे हास्यास्पद बना देती है। इस दृष्टि से ज्ञान रंजन की आरम्भिक कहानियाँ 'फेंस के इधर–उधर', 'पिता', 'षेष होते हुए' अति महत्वपूर्ण हैं।

वर्त्तमान दौर में सभी संबंध स्वार्थ साधने भर के रह गए हैं। साठोत्तरी कहानी ने संबंधों की इस निर्मम परिणति को अलग–अलग दृष्टिकोण से देखा है। वैसे आज की अधिकांष कहानियाँ पिता–पुत्र और दाम्पत्य संबंधों को लेकर लिखी जा रही है। बढ़ती आर्थिक और वैयक्तिक स्वार्थपरता ने इन संबंधों को और भी वीभत्स रुप प्रदान किया है। आज की कहानियों में पिता–पुत्र के संबंधों में आ रही खटास बड़ी सजीवता से उभर रही है। इनमें कहीं पिता को पुत्र के प्रति निर्मम तो कहीं पुत्र द्वारा पिता को भार समझने का दर्द छुपा दिखायी देता है। रमेष बक्षी की 'पिता–दर–पिता' कहानी इस दर्द को पूर्णता के साथ उद्घाटित करती है। इसमें बेटा पिता के प्रति घृणास्पद भाव अपनाते हुए कहता है ''अरे हटाइए पिता–फिता से कुछ नहीं होता और एक भार सिर पर रहता है। अब मुझे देखिए क्या फर्क पड़ता है कि ये मेरे पिता हैं या देवदार का पेड़ मेरे पिता हैं।'

नरेन्द्र कोहली की 'पहचान' कहानी में उस बेटे का दर्द चित्रित किया गया है जिसमें पिता उसे पूरी जिंदगी समझ नहीं पाते हैं। वह एक कलाकार के कोमल हृदय का चित्रकार नवयुवक है और पिता उसे जिंदगी के दूसरे रास्तों पर चलाना चाहते हैं। जब वे उसकी चित्रकला की ऊँची षिक्षा से समझौता भी कर लेते हैं तो उसे व्यावसायिक कला की षिक्षा दिलाने पर जोर देते हैं किन्तु उसका कलाकार मानस यह स्वीकार नहीं करता। पिता के अंतिम समय में जब बेटा भावाकुल होकर कहता है 'टेरिबला पापा मुझे पहचान ही नहीं रहे.....तो उसका दोस्त बस्तुस्थिति को इस रुप में विष्लेषित करता है – 'उसके इस वाक्य ने जैसे मेरे भीतर भी बहुत कुछ छिल दिया। मन हुआ कि कुछ रोष के साथ पूछूं – तेरे पापा ने सारा जीवन कभी तुम्हें पहचाना भी था।' समकालीन कहानियों में बहुत सी कहानियां इस दर्द को लेकर लिखी जा रही है। इस संदर्भ में डॉ0 महेष्वर की 'पेषाब', गंगा प्रसाद विमल की 'उसकी पहचान', कृष्ण बलदेव बैद की 'ऋण' जैसे कहानियां देखी जा सकती हैं।

संबंधों में आती यह दरकन–टूटन सिर्फ माता–पिता, भाई–भाई, भाई–बहन के रिष्तों तक ही सीमित नहीं रही बल्कि इसका दायरा इतना बढ़ गया हैं कि पति–पत्नी के दाम्पत्य जीवन में भी स्पष्टतः दिखलाई पड़ता है। इसके मूल में भी कहीं आर्थिक स्थिति तो कहीं आधुनिक सोच और

भौतिकता का प्रभाव ही है। इसरायल की 'सर्द हवाएं' गिरिराज किषोर की 'ठंडक' इत्यादि कहानियां इस दर्द को बखूबी उभार रही हैं।

समकालीन कहानीकारों ने अपनी कहानियों में मध्य वर्ग के समानान्तर आम आदमी की जिंदगी और उसके सवालों को रचना का विषय बनाया। यह आम आदमी एक तरफ जहां व्यवस्था की असमानता का षिकार था, वहीं दूसरी तरफ जन समूहों के संघर्ष से जुड़ते हुए जीवन के छोटे–छोटे सवालों से टकरा रहा था। स्वयं प्रकाष, मृणाल पाण्डेय, अरूण प्रकाष, चित्रा मुद्गल, नासिरा शर्मा, पंकज विष्ट, मंजुर एहतेषाम, अखिलेष, धीरेंद्र आस्थाना, महेष दर्पण आदि कहानीकारों ने इस विषय पर बहुत सी कहानियां लिखीं। इन्होंने मध्यवर्गीय जिंदगी और उसके समानान्तर जीवन की समस्याओं से जुझ रहे आम आदमी को मजबुत इरादों के साथ कहानियों में चित्रित किया। उदय प्रकाष की 'पाल मोगरा का स्कूटर' तथा अखिलेष की 'बायोडाटा' कहानी में छोटी–छोटी जरूरतों की पूर्ति के लिए संघषरत् एवं स्थितियें के कारण धीरे–धीरे परिवार व समाज की निगाह में अप्रांसगिक होते जा रहे मनुष्य की विडंबनापूर्ण यथार्थ का मार्मिक चित्रण मिलता है।

इस प्रकार साठोत्तरी कहानी नई सामाजिक व्यवस्था में जो सामाजिक व पारिवारिक रिष्ते बन–बिगड़ रहे हैं उनको आवाज देती है तथा सामाजिक व पारिवारिक समस्याओं व सरोकारों को केन्द्र में रखकर आम आदमी की आवाज को बुलंद करती है जिसके आधार पर हम कह सकते हैं कि साठोत्तरी कहानी के सामने जो नई सोच, भाव, समस्याएं आयी उनको आत्मसात् किया और इस काल के कहानीकारों ने उसे अपनी कहानियों के माध्यम से बखूबी प्रस्तुत किया।

सन्दर्भ–सूची

1. स्मकालीन हिन्दी कहानी : डॉ0 पुष्पपाल सिंह
2. रमेष बख्शी : पिता–दर–पिता
3. नरेन्द्र कोहली : पहचान, सारिका
4. साठ के बाद की कहानियां : विजयमोहन सिंह एवं मधुर सिंह
5. समकालीन कहानी : दिषा और दृष्टि : डॉ0 धनंजय
6. नई कहानी – नए प्रष्न : डॉ0 संतबख्श सिंह
7. नई कहानी की भूमि – कमलेष्वर
8. चर्चित कहानियां : ममता कालिया
9. एक दुनिया समानान्तर – राजेन्द्र यादव